उत्तम आकिंचन्य

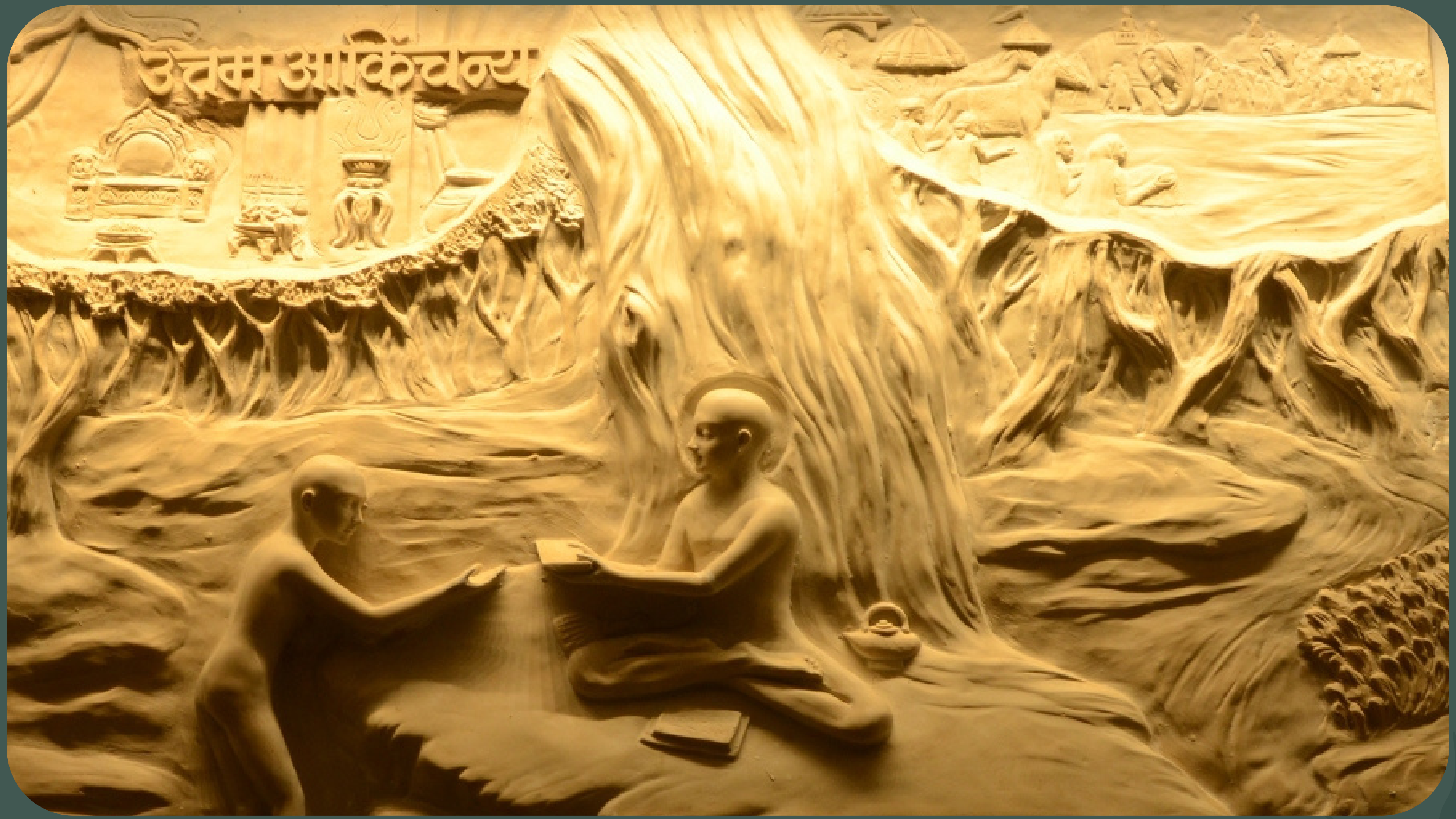

निदेशक - डॉ.बी.सी. जैन

परिभाषा

आत्मा को छोड़कर किंचित्मात्र भी परपदार्थ तथा पर के लक्ष्य से उत्पन्न होने वाले मोह–राग–द्वेष के भाव आत्मा के नहीं हैं– ऐसा जानना, मानना और उनसे विरत होना, उन्हें छोड़ना ही उत्तम आकिंचन्यधर्म है।

परिग्रह किसे कहते हैं ?

आत्मा में उत्पन्न होने वाले मोह-राग-द्वेषादि भावरूप आभ्यन्तर परिग्रह को निश्चय परिग्रह और बाह्य परिग्रह को व्यवहार परिग्रह भी कहा जाता है।

दो प्रकार का परिग्रह- आभ्यन्तर और बाह्य

14 आभ्यन्तर परिग्रह- मिथ्यात्व, क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा (ग्लानि), स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद

10 बाह्य परिग्रह दश प्रकार के होते हैं- क्षेत्र (खेत, प्लाट), वास्तु (निर्मित भवन), धन (चांदी, सोना, जवाहरात, मुद्रा), धान्य, द्विपद (मनुष्य, पक्षी), चतुष्पद (पशु), यान (सवारी), शय्यासन, कुप्य और भांड

जैन पाठशाला

जीव परिग्रह क्यों करते हैं?

1. पर पदार्थों में सुख की कल्पना के कारण व्यक्ति परिग्रह का संचय करता है।
2. जब व्यक्ति अपनी प्रभुता पर पदार्थों से समझता है तो परिग्रह को जोड़ता है।

परिग्रह के नुकसान

1. जितना अधिक परिग्रह उतने अधिक विकल्प, जैसे उनकी चोरी का भय, रक्षा के उपाय, वृद्धि के विकल्प आदि।
2. परिग्रह एक ऐसा पाप है जिसको करते हुए भी व्यक्ति प्रायः उसको पाप रूप स्वीकार नहीं करते हैं और जिस पाप को पाप ही ना समझ जाए तो उसको रोकने का उपाय कोई क्यों करेगा ? (अंतरंग परिग्रह)

जैन पाठशाला
JAIN PATHSHALA

उत्तम आकिंचन्य धर्म

परिग्रह चौबीस भेद, त्याग करें मुनिराज जी।
तिसना भाव उछेद, घटती जान घटाइए।।
उत्तम आकिंचन गुण जानो, परिग्रह-चिंता दुःख ही मानो।
फाँस तनक-सी तन में साले, चाह लंगोटी की दुःख भाले।।
भाले न समता सुख कभी नर, बिना मुनि-मुद्रा धरे।
धनि नगन पर तन-नगन ठाढ़े, सुर-असुर पायनि परें।।
घर-माँहिं तिसना जो घटावे, रुचि नहीं संसार-सों।
बहु-धन बुरा हू भला कहिये, लीन पर उपगार कों।।

द्यानतराय जी द्वारा रचित दशलक्षण धर्म पूजन

सरल अर्थ

परिग्रह के चौबीस भेद होते हैं। उनका त्याग मुनिराज करते हैं और तृष्णा भाव को क्षय करते हैं। इसीप्रकार श्रावकों को भी धीरे–धीरे दोनों प्रकार के (अंतरंग और बहिरंग) परिग्रहों को कम करना चाहिए। उत्तम आकिंचन्य उत्कृष्ट गुण जानना चाहिए। परिग्रह की चिंता दुख देने वाली मानो। जिसप्रकार छोटी–सी फाँस लग जाने पर पूरे शरीर में कष्ट देती है, उसीप्रकार एक लँगोटी की इच्छा दुःख देने वाली है। दिगंबर मुनि की मुद्रा को धारण किए बिना मनुष्य कभी समता और सुख प्राप्त नहीं कर सकता है। वे मुनिराज धन्य हैं जो पर्वतों पर नग्न खड़े रहकर तप करते हैं, उनके चरणों की सुर–असुर आदि अर्चना करते हैं। घर में रहते हुए भी जो अपनी तृष्णा को घटाते हैं और संसार में अपनी रुचि नहीं रखते हैं, वे श्रावक भी धन्य हैं। बहुत धन–सम्पत्ति तो बुरी ही होती है, परंतु जो धन परोपकार में लगता है, वह फिर भी श्रेष्ठ कहा गया है।

उदाहरण

उत्तम आकिंचन्य धर्म में प्रसिद्ध

शान्ति-कुंथु-अरनाथ

परिग्रह के कारण दुर्गति को प्राप्त

श्मश्रु नवनीत

उत्तम आकिंचन्य धर्म

पर वस्तु त्याग आकिंचन जानो।
तृष्णा भाव न मन में आनो। ।
परिग्रह भाव महा दुःखकारी।
संसार बढ़ावे बोझा भारी। ।
श्मश्रु नवनीत सम सपने छोड़ो।
शांति-कुन्थु-अरि सम मुख मोड़ो। ।- समकित शास्त्री

यह anti-virus हमें कम से कम data save करने की सलाह देता है।

कहानी

एक विदेशी टूरिस्ट ने जब पहली बार एक संत को देखा तो वह उनके रहन–सहन को देख आश्चर्यचकित रह गया। छोटी–सी कुटिया, गिनती के दो कपड़े और नाम मात्र के बर्तन। वह आश्चर्यचकित था कि इतनी–सी वस्तुओं के साथ कोई अपना पूरा जीवन कैसे व्यतीत कर सकता है।

विदेशी टूरिस्ट ने पता करने के लिए संत से पूछा– आपका बाकी सामान और कपड़े कहाँ हैं ?

प्रश्न के जवाब में संत ने टूरिस्ट से सवाल किया– तुम्हारा बाकी सामान कहाँ है?

टूरिस्ट ने कहा– पर मैं तो यात्री–पर्यटक हूँ।

संत ने कहा– मैं भी तो इस दुनिया में यात्री और पर्यटक ही हूँ।

सच ही है, जैसे धर्मशाला में ठहरे यात्री की धर्मशाला की किसी भी वस्तु पर कोई भी अधिकार नहीं होता, कोई भी वस्तु उसकी अपनी नहीं होती; वैसे ही इस संसार का किंचित्मात्र भी मेरा भी नहीं है, यही आकिंचन्य धर्म है।

जय जिनेन्द्र

www.jainpathshalajaipur.com
Youtube: Jain Pathshala Jaipur
E-mail: jainpathshalajaipur@gmail.com
Phone : 0141-3567401, 8619804009, 8955872717

विशेष सहयोग - समकित शास्त्री